- भारतीय दर्शन में मोक्ष प्राप्ति के तीन मार्ग - ज्ञान, कर्म, भक्ति बताये गये हैं ।
  - वेदों में कर्म मार्ग पर बल दिया गया है।
  - उपनिषदों में ज्ञान मार्ग पर बल दिया गया है।
  - और मध्यकाल में भक्ति मार्ग पर बल दिया गया है।
- मध्य काल में अनेक ऐसे धार्मिक विचारक हुए जिन्होंने भक्ति को अधिक महत्व दिया एवं धर्म सुधार का एक नया आंदोलन प्रारम्भ किया जो भक्ति आंदोलन के नाम से विख्यात हुआ ।
- आंदोलन का इतिहास महान धर्म सुधारक शंकराचार्य के समय से आरम्भ होता है जिन्होंने तत्कालीन बौद्ध धर्म को टक्कर देते हुए हिन्दु धर्म को एक ठोस व दार्शनिक आधार पर खड़ा किया।
- इन्होंने अद्वैत दर्शन की स्थापना की एवं मोक्ष के ज्ञान मार्ग पर अधिक बल दिया ।
- इस धार्मिक विचारधारा के मुख्य प्रवर्तकों में रामानुज, रामानन्द व उनके शिष्य रैदास, कबीर आदि प्रमुख थे।
- भक्ति आंदोलन के महानतम सन्तों में चैतन्य, नामदेव, तुकाराम, कबीर, नानक थे।
- इन सुधारकों ने हिन्दु धर्म के बाह्य आडम्बरों, जाति-व्यवस्था तथा धार्मिक कट्टरता का विरोध किया एवं हिन्दु धर्म में सुधार का प्रयास किया ।
- भक्ति आंदोलन व्यापक था और सम्पूर्ण देश में उसका प्रसार हुआ।

- बौध धर्म के पतन के बाद भारत में इतना व्यापक व लोकप्रिय अन्य कोई आंदोलन नहीं हुआ।
- इस आंदोलन का ठोस परिणाम यह हुआ कि प्रान्तीय भाषाओं के साहित्य का उत्कर्ष हुआ।
- इन संतों ने जन साधारण की भाषा में उपदेश दिये जिससे हिंदी, बंगाली, मराठी, मैथिल, तमिल, तेलगू आदि भाषाऐं समुन्नत हुई ।
- इसी कारण भक्ति आन्दोलन के काल को प्रान्तीय भाषाओं के विकास की दृष्टि से स्वर्णयुग कहा जा सकता है।
- भक्ति आन्दोलन का उदय दक्षिण भारत में हुआ।

1. **अलवार संत :-** ये विष्णु भक्त थे।
   कुल संख्या = 63
2. **नयनार संत :-** ये शिव भक्त थे।
   कुल संख्या = 12

- इसके बाद भक्ति आन्दोलन महाराष्ट्र में लोकप्रिय हुआ।
- महाराष्ट्र के प्रमुख संत :- ज्ञानदेव, नामदेव, एकनाथ, तुकाराम ।
- उत्तर भारत में संत रामानन्द के द्वारा भक्ति आन्दोलन को लोकप्रिय बनाया गया।
- भक्ति आन्दोलन की दो धाराएँ थी-

1. **निर्गुण भक्ति**
2. **सगुण भक्ति**

- भक्ति आन्दोलन के समानान्तर इस्लाम धर्म में सूफी आन्दोलन चला।
- इस काल की प्रभावी विशिष्टता है कि साहित्य और मूर्तिकला दोनों में ही अनेक तरह के देवी- देवता अधिकाधिक दृष्टिगत होते हैं ।

पूजा प्रणालियों का समन्वय :-

- इतिहाकारों के अनुसार पूजा प्रणाली के सम्बन्ध में दो प्रक्रियाओं का उल्लेख मिलता है।

1. पहली प्रक्रिया ब्राह्मणवादी विचारधारा के प्रसार से संबंधित थी।

- इसमें ब्राह्मणवादी विचारधारा का प्रचार- प्रसार परिश्रमपूर्वक - पौराणिक ग्रन्थों की रचनाओं का संकलन करके किया गया।
- ये पौराणिक ग्रन्थ सरल संस्कृत भाषा में रचे गये थे और वैदिक विधा से विहीन स्त्रियों व शुद्रों द्वारा भी ये ग्राह्य थे।

2. इसी काल की दूसरी प्रक्रिया में स्त्रियों, शुद्रों और अन्य सामाजिक वर्गों की आस्थाओं एवं आचरणों को ब्राह्मणों द्वारा स्वीकृति दे कर, उन्हें नये रूप में पेश किया गया ।

- समाजशास्त्रियों ने सम्पूर्ण भारतीय उपमहाद्वीप में फैली हुई अनेक धार्मिक विचारधाराओं और पद्धतियों को 'महान' संस्कृत पौराणिक परिपाटी एवं"लघु" परम्पराओं के बीच पारस्परिक संवाद का परिणाम बताया है ।

"महान" और " लघु" परंपराएँ

"महान" और "लघु" जैसे शब्द बीसवीं शताब्दी के समाजशास्त्री राबर्ट रेडफील्ड द्वारा एक कृषक समाज के सांस्कृतिक आचरणों का वर्णन करने के लिए मुद्रित किए गए। इस समाजशास्त्री ने देखा कि किसान उन कर्मकांडों और पद्धतियों का अनुकरण करते थे।

जिनका समाज के प्रभुत्वशाली वर्ग जैसे पुरोहित और राजा द्वारा पालन किया जाता था। इन कर्मकांडों को रेडफील्ड ने "महान" परंपरा की संज्ञा दी। साथ ही कृषक समुदाय अन्य लोकाचारों का भी पालन करते थे जो

इस महान परिपाटी से सर्वथा भिन्न थे। उसने इन्हें "लघु" परंपरा के नाम से अभिहित किया। रेडफील्ड ने यह भी देखा कि महान और लघु दोनों ही परंपराओं में समय के साथ हुए पारस्परिक आदान-प्रदान के कारण परिवर्तन हुए।

- इस प्रक्रिया का सबसे विशिष्ट उदाहरण पुरी (जगन्नाथपुरी), उड़ीसा में मिलता है जहाँ मुख्य देवता को बारहवीं शताब्दी तक आते-आते जगन्नाथ (जिसका शाब्दिक अर्थ सम्पूर्ण विश्व का स्वामी है), विष्णु के एक स्वरूप के रूप में प्रस्तुत किया गया।
- इस उदाहरण में एक स्थानीय देवता को जिसकी प्रतिमा को पहले व आज भी लकड़ी से स्थानीय जनजाति के विशेषज्ञों द्वारा गढ़ा जाता है, भगवान विष्णु के रूप में प्रस्तुत किया गया है।
- विष्णु का यह स्वरूप देश के अन्य भागों में मिलने वाले स्वरूपों से सर्वदा भिन्न था।

भेद एवं संघर्ष

वैदिक परिपाटी के प्रशसंक	**वैदिक परिपाटी की अवहेलना करने वाले**
ईश्वर की उपासना के लिए मंत्र व यज्ञों को अनिवार्य मानते थे।	तांत्रिक अराधना में लगे थे ।
देवता - अग्नि, इन्द्र, सोम	यहाँ वैदिक देवता पूरी तरह गौण हो गए।

- वैदिक व पौराणिक परम्परा के बीच तुलना करने पर यह अन्तर या विषमता और स्पष्ट रूप से सामने आती है।
- जहाँ एक ओर वैदिक देवकुल के देवता अग्नि, इन्द्र, सोम आदि गौण हो जाते हैं और साहित्य व मूर्तिकला में उनका निरूपण दिखाई नहीं देता।
- इन सभी असंगतियों के बाद भी वेदों को प्रमाणिक माना जाता रहा ।
- इन परिस्थितियों में कई बार संघर्ष की स्थिति भी उत्पन्न हो जाती थी ।
- वैदिक परम्पराओं को मानने वाले उन लोगों की निन्दा करते थे जो ईश्वर की उपासना के लिए मंत्रों के उच्चारण व यज्ञों के सम्पादन का विरोध करते थे।
- इस समय शिव व विष्णु के अनुयायी भी अपने- अपने इष्टदेव को सर्वोच्य प्रक्षेपित करते थे।
- बौध व जैन धर्म के सिद्धांतों व धर्म को मानने वाले धर्मालम्बियों के संबंध भी कभी-कभी तनावपूर्ण हो जाते थे। हालांकि स्पष्ट विरोध कम ही दिखाई देता था । भक्ति परम्परा को हमें इसी संदर्भ में देखना होगा ।

LET'S LEARN TOGETHER

उपासना की कविताएँ :-

- भक्ति परम्परा का वर्णन करने वाले इतिहासकार इसे दो मुख्य वर्गों में बाँटते हैं-

1. **सगुण (विशेषण सहित) :-** सगुण भक्ति धारा में शिव, विष्णु तथा उनके अवतार व देवियों की आराधना की जाती थी, जिनकी मूर्त रूप में अवधारणा हुई।
2. **निर्गुण (विशेषण रहित) :-** निर्गुण भक्ति धारा में ईश्वर निराकार

Now Invest in missiongyan GYAN App Now from Play Store

तमिलनाडु के अलवार और नयनार संत :-

- लगभग छठी शताब्दी के प्रारंभ में भक्ति आंदोलन दक्षिण भारत में अलवारों (विष्णु भक्ति में तन्मय) और नयनारों (शिव भक्त) के नेतृत्व में प्रारंभ हुआ ।
- अलवार व नयनार संत एक स्थान से दूसरे स्थान पर भ्रमण करते हुए अपने इष्ट विष्णु व शिव की स्तुति में भजन गाते थे।
- उस भ्रमण व यात्राओं के दौरान अलवार व नयनार संतों ने कुछ पावन व पवित्र स्थानों को अपने इष्ट का निवास घोषित किया।
- बाद में इन्हीं स्थानों पर विशाल मन्दिरों का निर्माण किया गया व ये स्थल तीर्थ स्थल माने गये ।
- यहां संत कवियों के भजनों को इन मंदिरों के अनुष्ठानों में गाया जाता था।
- इन संतों की प्रतिमाओं/ मूर्तियों की भी यहां पूजा की जाती थी।

जाति के प्रति दृष्टिकोण

- अलवार और नयनार संतों ने जाति प्रथा व ब्राह्मणों की प्रभुता के विरोध में आवाज़ उठाई।
- भक्ति संत विविध समुदायों से थे जैसे ब्राह्मण, शिल्पकार, किसान और कुछ तो उन जातियों से आए थे जिन्हें "अस्पृश्य" माना जाता था।
- अलवार संतों के एक मुख्य काव्य संकलन नलयिरादिव्यप्रबंधम् का वर्णन तमिल वेद के रूप में किया जाता था। इस तरह इस ग्रंथ का महत्व संस्कृत के चारों वेदों जितना बताया गया।

स्त्री भक्त :-

- दक्षिण भारत में भक्ति परम्परा की सबसे बड़ी विशिष्टता इसमें स्त्रियों की उपस्थिति थी।

- अंडाल नामक अलवार (विष्णु भक्त) स्त्री के भक्ति गीत व्यापक स्तर पर गाये जाते थे तथा आज भी गाये जाते हैं।
- इसी प्रकार एक स्त्री शिव भक्त करइक्काल अम्मइयार हुई ।
- इन्होंने भक्ति हेतु घोर तपस्या का मार्ग अपनाया।
- नयनार (शिव भक्त) परंपरा में उनकी कविताओं/रचनाओं को सुरक्षित किया गया।
- इन स्त्रियों ने अपने सामाजिक कर्त्तव्यों का परित्याग किया। ये भिक्षुणी समुदाय या अन्य वैकल्पिक व्यवस्था की सदस्य नहीं बनी।
- इनकी रचनाओं और जीवन पद्धति से ऐसा प्रतीत होता है कि इन्होंने उस समय प्रचलित पितृसत्तात्मक आदर्शों को चुनौती दी ।

भक्ति साहित्य का संकलन

- दक्षिणी भारत में दसवीं शताब्दी आते-आते बारह अलवर (विष्णुभक्त) सन्तों की रचनाओं का संकलन किया गया।
- इस संकलन को "नलयिरादिव्यप्रबंधम्" नाम से जाना जाता है।
- इस का अर्थ "चार हजार पावन रचनाएँ" है ।
- दसवीं शताब्दी में अप्पार संबंदर और सुंदरार की भक्ति की कविताएँ "तवरम" नामक संकलन में रखी गई।

राज्य के साथ संबंध :-

- प्रथम सहस्त्राब्दी ई. के उत्तरार्ध में तमिल क्षेत्र में कई राज्यों का उद्भव व विकास हुआ।
- जिनमें पल्लव और पांड्य राज्य शामिल थे।
- इस समय दक्षिण भारत में जैन व बौध धर्म मौजूद थे ।
- इन धर्मो को व्यापारी व शिल्पी वर्ग का आश्रय प्राप्त था ।

- इन धर्मों को राजकीय आश्रय, संरक्षण और अनुदान यदा-कदा ही प्राप्त होता था ।
- तत्कालीन तमिल भक्ति रचनाओं की एक मुख्य विषय वस्तु बौध व जैन धर्म के प्रति उनका विरोध है ।
- इतिहासकारों के अनुसार विरोध का मुख्य कारण धार्मिक समुदायों में राजकीय अनुदान को लेकर मुकाबला रहता था।
- नवीं से तेरहवीं शताब्दी के मध्य दक्षिण भारत में शक्तिशाली चोल सम्राटों ने ब्राह्मणीय और भक्ति परंपरा को समर्थन किया।
- इन्होंने विष्णु और शिव मंदिरों के निर्माण हेतु भूमि अनुदान दिए ।
- चोल सम्राटों की मदद से दक्षिण में चिदम्बरम, तंजावुर और गंगैकोंडचोलपुरम में विशाल शिव मंदिरों का निर्माण हुआ ।



चिदम्बरम



तंजावुर



गंगैकोंडचोलपुरम

- कांस्य से ढाली गई शिव प्रतिमाओं का निर्माण भी इसी काल में हुआ ।
- दक्षिण में अलवार व नयनार संत, वेल्लाल कृषकों से सम्मानित होते थे ।
- तत्कालीन शासकों ने इसी कारण से उनका समर्थन पाने का प्रयास किया।
- चोल सम्राटों ने दैवीय समर्थन या अंश होने का दावा किया।
- सत्ता के प्रदर्शन के लिए सुंदर मंदिरों का निर्माण करवाया।

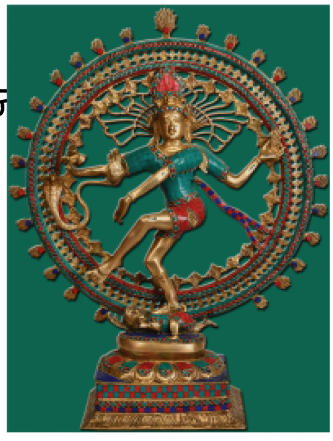

- मंदिरों में सुन्दर पत्थर व धातुओं से सुसज्जित मूर्तियां स्थापित की।
- चोल सम्राट परांतक प्रथम ने संत कवि अप्पार संबंदर और सुंदरार की धातु प्रतिमाएँ एक शिव मंदिर में स्थापित करवाई जिन्हें उत्सव में एक जुलुस में निकाला जाता था।
- बारहवीं शताब्दी में कर्नाटक में एक नवीन आन्दोलन का उद्भव हुआ ।

नेतृत्व :- बासवन्ना (1106-68) नामक ब्रह्मण के द्वारा किया गया।

बासवन्ना

- ये कलचुरी के राजा के दरबार में मंत्री थे ।
- इनके अनुयायी वीरशैव (शिव के वीर) व लिंगाय कहलाए ।
- ये शिव की आराधना लिंग के रूप में करते हैं ।
- लिंगायत समुदाय के पुरुष वाम स्कंध (बायां कंधा) पर चाँदी के एक पिटारे में एक लघु लिंग को धारण करते हैं।
- लिंगायतों ने जाति की अवधारणा और कुछ समुदायों के "दूषित" होने की ब्राह्मणीय अवधारणा का विरोध किया ।
- पुनर्जन्म के सिद्धान्तों पर भी प्रश्न चिह्न लगाया।
- इन सब कारणों से ही ब्रह्मणीय सामाजिक व्यवस्था में जिन समुदायों को गौण स्थान मिला था वे लिंगायतों के अनुयायी हो गए।
- लिंगायतों ने वयस्क विवाह और विधवा पुनर्विवाह आदि को भी मान्यता प्रदान की, जिन्हे धर्मशास्त्रों में अस्वीकार किया गया था।

अनुष्ठान और यथार्थ संसार

यह बासवन्ना द्वारा रचित एक वचन है:

जब वे एक पत्थर से बने सर्प को देखते हैं

तो इस पर दूध चढ़ाते हैं

यदि असली साँप आ जाए तो कहते हैं
"मारो-मारो" ।
देवता के उस सेवक को, जो भोजन परोसने
पर खा सकता है वे कहते हैं "चले जाओ!
चले जाओ।"
किन्तु ईश्वर की प्रतिमा को जो खा नहीं
सकती, वे व्यंजन परोसते हैं।

उत्तरी भारत में धार्मिक उफान

- 14 वीं शताब्दी तक उत्तरी भारत में अलवार और नयनार संतों की रचनाओं जैसा कोई ग्रन्थ प्राप्त नहीं हुआ।
- हालांकि उत्तरी भारत में भी विष्णु और शिव जैसे देवताओं की उपासना मंदिरों में की जाती थी।

- इस भिन्नता की क्या वजह हो सकती है

कुछ इतिहासकारों का मत है कि-

- उत्तरी भारत में यह वह काल था जब अनेक राजपूत राज्यों का उदय हुआ। इन सभी राज्यों में ब्रह्मणों का महत्त्वपूर्ण स्थान था और वे ऐहिक तथा आनुष्ठानिक दोनों ही कार्य करते थे।
  ब्रह्मणों की इस प्रभुसत्ता को सीधे चुनौती देने का प्रयास शायद किसी ने नहीं किया।
- इसी समय वे धार्मिक नेता जो रूढ़िवादी ब्रह्मणीय साँचे के बाहर थे, उनके प्रभाव में विस्तार हो रहा था।
- अनेक नवीन धार्मिक नेताओं ने वेदों की सत्ता को चुनौती दी और अपने विचार आम लोगों की भाषा में सामने रखे।

- अपनी लोकप्रियता के बावजूद नवीन धार्मिक नेता विशिष्ट शासक वर्ग का प्रश्रय हासिल करने की स्थिति में नहीं थे ।
- इसी स्थिति में भारत में तुर्कियों का (इस्लाम धर्म) आगमन हुआ।
- दिल्ली सल्तनत की स्थापना से राजपूत राज्यों का और उनसे जुड़े ब्रह्मणों का पराभव हुआ।
- इन परिवर्तनों का प्रभाव संस्कृति और धर्म पर भी पड़ा।
- सूफियों का आगमन इन परिवर्तनों का एक महत्त्वपूर्ण अंग था।

दुशाले के नए ताने-बानेः इस्लामी परंपराएँ

- प्रथम सहस्त्राब्दी ईसवी में अरब व्यापारी समुद्र के रास्ते पश्चिमी भारत के बंदरगाहों तक आए।
- इसी समय मध्य ऐशिया से लोग देश के उत्तर- पश्चिम प्रातों में आकर बस गए।
- 7 वीं शताब्दी में इस्लाम के उद्भव के बाद में यह क्षेत्र इस्लामी विश्व का हिस्सा बन गए।

शासकों और शासितों के धार्मिक विश्वास

- 711 ईसवीं में मुहम्मद बिन कासिम नाम के अरब सेनापति ने सिंध को विजित कर लिया।
- बाद में तुर्क और अफगानों ने दिल्ली सल्तनत की नींव रखी।
- समय के साथ दक्कन और अन्य भागों में भी सल्तनत की सीमा का प्रसार हुआ ।
- इन क्षेत्रों में इस्लाम शासकों का स्वीकृत धर्म था।
- मुसलमान शासकों को उलमा के मार्गदर्शन पर चलना होता था।

उलमा :- इस्लाम धर्म के ज्ञाता थे।

- शासन के धार्मिक व कानूनी और अध्यापन संबंधी जिम्मेदारी निभाते थे ।

शरिया

शरिया मुसलमान समुदाय को निर्देशित करने वाला कानून है। यह कुरान शरीफ़ और हदीस पर आधारित है। हदीस का अर्थ है पैगम्बर साहब से जुड़ी परंपराएँ जिनके अंतर्गत उनके स्मृत शब्द और क्रियाकलाप भी आते हैं। जब अरब क्षेत्र से बाहर इस्लाम का प्रसार हुआ जहाँ के आचार-व्यवहार भिन्न थे तो क़ियास (सदृशता के आधार पर तर्क) और इजमा (समुदाय की सहमति) को भी कानून का स्रोत माना जाने लगा। इस तरह शरिया, कुरान, हदीस, क़ियास और इजमा से उद्भूत हुआ।

- उलमा से यह अपेक्षा की जाती थी कि वे शासन में शरिया का अमल (पालन) सुनिश्चित करवाएँगे ।
- किंतु भारतीय उपमहाद्विप में स्थिति जटिल थी क्योंकि यहाँ बड़ी जनसंख्या इस्लाम धर्म को मानने वाली नहीं थी।
- इस प्रकार जिम्मी अर्थात् संरक्षित श्रेणी का प्रादुर्भाव हुआ ।
- **जिम्मी :-** जिम्मी वे लोग थे जो उद्घटित धर्मग्रन्थ को मानते थे जैसे इस्लामी शासकों के क्षेत्र में रहने वाले यहूदी और ईसाई । ये लोग जजिया नामक कर चुका कर मुसलमान शासकों द्वारा संरक्षण दिये जाने के अधिकारी हो जाते थे। भारत में इसके अन्तर्गत हिन्दूओं को भी शामिल कर लिया गया।
- वास्तव में शासक शासितों की तरफ़ काफ़ी लचीली नीति अपनाते थे।

उदाहरणत; बहुत से शासकों ने भूमि अनुदान व कर की छूट हिंदू, जैन, पारसी, ईसाई और यहूदी धर्मसंस्थाओं को दी तथा साथ ही गैर-मुसलमान धार्मिक नेताओं के प्रति श्रद्धाभाव व्यक्त किया। ऐसे अनुदान, अनेक मुगल बादशाहों जिनमें अकबर और औरंगज़ेब शामिल थे, द्वारा दिए गए।

खम्बात का गिरजाघर

यह उद्धरण उस फ़रमान (बादशाह के हुक्मनामे) का अंश है जिसे 1598 में अकबर ने जारी किया :

हमारे बुलंद और मुकद्दस (पवित्र) ज़ेहन में पहुँचा है कि यीशु की मुकद्दस जमात के पादरी खम्बायत गुजरात के शहर में इबादत के लिए (गिरजाघर) एक इमारत की तामीर (निर्माण) करना चाहते हैं; इसलिए यह शाही फ़रमान.... जारी किया जा रहा है... खम्बायत के महानुभाव किसी भी तरह उनके रास्ते में न आएँ और उन्हें गिरजाघर की तामीर करने दें जिससे वे अपनी इबादत कर सकें। यह ज़रूरी है कि बादशाह के इस फ़रमान की हर तरह से तामील (पालन) हो ।

लोक प्रचलन में इस्लाम

- इस्लाम के आगमन के बाद जो परिवर्तन हुए वे शासक वर्ग तक ही सीमित नहीं थे, अपितु पूरे उपमहाद्वीप में दूरदराज़ तक और विभिन्न सामाजिक समुदायों – किसान, शिल्पी, योद्धा, व्यापारी के बीच फैल गए। जिन्होंने इस्लाम धर्म कबूल किया उन्होंने सैद्धांतिक रूप से इसकी पाँच मुख्य 'बातें मानीं :

1. अल्लाह एकमात्र ईश्वर हैं; पैगम्बर मोहम्मद उनके दूत (शाहद) हैं;
2. दिन में पाँच बार नमाज़ पढ़ी जानी चाहिए;

3. खैरात (ज़कात) बाँटनी चाहिए;
4. रमज़ान के महीने में रोजा रखना चाहिए
5. हज के लिए मक्का जाना चाहिए।

समुदायों के नाम

- हम अधिकतर हिन्दू और मुसलमान जैसे शब्दों को धार्मिक समुदायों का द्योतक मान लेते हैं ।
- किन्तु जिन इतिहासकारों ने आठवीं से चौदहवीं शताब्दी के मध्य संस्कृत ग्रंथों और अभिलेखों का अध्ययन किया है वे इस तथ्य को उजागर करते हैं कि-
- इनमें मुसलमान शब्द का शायद ही कहीं प्रयोग हुआ है।
- लोगों का वर्गीकरण उनके जन्मस्थान के आधार पर किया गया था ।
  - तुर्की मुसलमानों को तुरुष्क
  - तजाकिस्तान से आए लोगों को ताजिक
  - फारस के लोगों को पारसीक नाम से संबोधित किया गया था।
- इन प्रवासी समुदायों के लिए एक अधिक सामान्य शब्द म्लेच्छ था।

मलेच्छ :-

यह बात को इंगित करता है कि ये वर्ण व्यवस्था के नियमों का पालन नहीं करते थे । और ऐसी भाषाएँ बोलते थे जो संस्कृत से नहीं उपजी थी।

सूफीवाद और तसव्वुफ़

सूफ़ीवाद उन्नीसवीं शताब्दी में मुद्रित एक अंग्रेज़ी शब्द है। इस सूफीवाद के लिए इस्लामी ग्रंथों में जिस शब्द का इस्तेमाल होता है वह है तसव्वुफ़ (कल्पना, विचार, ख्याल)।

कुछ विद्वानों के अनुसार यह शब्द 'सूफ़' से लिया गया है जिसका अर्थ

ऊन है। यह उस खुरदुरे ऊनी कपड़े की ओर इशारा करता है जिसे सूफी पहनते थे।

अन्य विद्वान इस शब्द की व्युत्पत्ति 'सफ़ा' से मानते हैं जिसका अर्थ है साफ़ (पवित्र)। यह भी संभव है कि यह शब्द 'सफ़ा' से निकला हो जो पैगम्बर की मस्जिद के बाहर एक चबूतरा था जहाँ निकट अनुयायियों की मंडली धर्म के बारे में जानने के लिए इकट्ठी होती थी।

सूफीमत का विकास

- इस्लाम की आरंभिक शताब्दियों में कुछ लोगों का रहस्यवाद और वैराग्य की ओर झुकाव बढ़ा, इन्हें सूफी कहा जाने लगा।
- इन लोगों ने रूढ़िवादी परिभाषाओं तथा धर्माचार्यों द्वारा की गई कुरान और सुन्ना (पैगम्बर के व्यवहार) की बौद्धिक व्याख्या की आलोचना की।
- उन्होंने मुक्ति की प्राप्ति के लिए ईश्वर की भक्ति और उनके आदेशों के पालन पर बल दिया।
- उन्होंने पैगम्बर मोहम्मद को इंसान - ए - कामिल (आदर्श मानव) बताते हुए उनका अनुसरण करने की सीख दी।
- सूफ़ियों ने कुरान की व्याख्या अपने निजी अनुभवों के आधार पर की।

खानकाह और सिलसिला :

- ग्यारहवीं शताब्दी तक आते-आते सूफीवाद एक पूर्ण विकसित आन्दोलन था।
- सूफी अपने को एक संगठित समुदाय-खानकाह के इर्द-गिर्द स्थापित करते थे ।
- खानकाह का नियंत्रण शेख / पीर अथवा मुर्शिद के हाथ में था ।
- वे अनुयायियों की भर्ती करते थे और अपने वारिस (खलीफा) की नियुक्ति करते थे।

सूफी शब्दावली

- खानकाह - सूफी संत का आध्यात्मिक क्षेत्र (आश्रम)
- शेख / पीर - गुरु
- मुर्शीद - शिष्य
- वारिस / खलीफा – उत्तराधिकारी
- 12 वीं शताब्दी के आस-पास सूफी सिलसिलों का गठन होने लगा था।
- **सिलसिले का अर्थ :-** सिलसिले का शाब्दिक अर्थ है, जंजीर जो शेख और मुरीद के बीच एक निरंतर रिश्ते की द्योतक है जिसकी पहली अटूट कड़ी पैगम्बर मोहम्मद से जुड़ी है।
- पीर की मृत्यु के बाद उसकी दरगाह उसके मुरीदों के लिए भक्ति का स्थल बन जाती थी।
- इस तरह पीर की दरगाह पर जियारत के लिए जाने की खासतौर से उनकी बरसती के अवसर पर, परिपाटी चल निकली।
- इस परिपाटी को उर्स (पीर की आत्मा का ईश्वर से मिलन) कहा जाता था।
- इस तरह शेख का वली के रुप में आदर करने की परिपाटी शुरु हुई ।

सिलसिलों के नाम

ज़्यादातर सूफी वंश उन्हें स्थापित करने वालों के नाम पर पड़े। उदाहरणत; कादरी सिलसिला शेख अब्दुल कादिर जिलानी के नाम पर पड़ा। कुछ अन्य सिलसिलों का नामकरण उनके जन्मस्थान पर हुआ जैसे चिश्ती नाम मध्य अफगानिस्तान के चिश्ती शहर से लिया गया।

खानकाह के बाहर

नवीन आंदोलनों की नींव रखी।

- ख़ानक़ाह का तिरस्कार करके यह रहस्यवादी, फकीर की ज़िंदगी बिताते थे।
- निर्धनता और ब्रह्मचर्य को उन्होंने गौरव प्रदान किया। इन्हें विभिन्न नामों से जाना जाता था- कलंदर, मदारी, मलंग, हैदरी इत्यादि ।
- शरिया की अवहेलना करने के कारण उन्हें बे-शरिया कहा जाता था।
- इस तरह उन्हें शरिया का पालन करने वाले (बा- शरिया) सूफ़ियों से अलग करके देखा जाता था।

उपमहाद्वीप में चिश्ती सिलसिला

- बारहवीं शताब्दी के अंत में भारत आने वाले सूफ़ी समुदायों में चिश्ती सबसे अधिक प्रभावशाली रहे।
- **कारण :**

1. इन्होंने अपने आपको स्थानीय परिवेश में अच्छी तरह ढाला और
2. भारतीय भक्ति परंपरा की कई विशिष्टताओं को भी अपनाया।

चिश्ती सिलसिले के मुख्य उपदेशक

सूफी	मृत्यु का वर्ष	दरगाह का स्थान
शेख मुइनुद्दीन चिश्ती	1235	अजमेर (राजस्थान)
ख़्वाजा कुतुबुद्दीन बख़्तियार काकी	1235	दिल्ली
शेख फरीदुद्दीन गंज-ए-शकर	1265	अजोधन (पाकिस्तान)
शेख निज़ामुद्दीन औलिया	1325	दिल्ली
शेख नसीरुद्दीन चिराग-ए-देहली	1356	दिल्ली

चिश्ती खानकाह में जीवन

- खानकाह सामाजिक जीवन का केंद्र बिंदु था।
- शेख निज़ामुद्दीन औलिया (चौदहवीं शताब्दी) का ख़ानक़ाह दिल्ली शहर की बाहरी सीमा पर यमुना नदी के किनारे गियासपुर में था ।

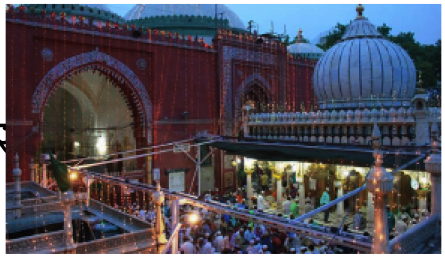

- यहाँ कई छोटे-छोटे कमरे और एक बड़ा हाल (जमातख़ाना) था जहाँ सहवासी और अतिथि रहते, और उपासना करते थे।
- सहवासियों में शेख का अपना परिवार, सेवक और अनुयायी थे।
- शेख एक छोटे कमरे में छत पर रहते थे जहाँ वह मेहमानों से सुबह - शाम मिला करते थे।
- एक बार मंगोल आक्रमण के समय पड़ोसी क्षेत्र के लोगों ने ख़ानक़ाह में शरण ली।
- यहाँ एक सामुदायिक रसोई (लंगर) फ़ुतूह (बिना माँगी खैरात) पर चलती थी।
- सुबह से देर रात तक सब तबके के लोग - सिपाही, गुलाम, गायक, व्यापारी, कवि, राहगीर, धनी और निर्धन, हिंदू जोगी और कलंदर यहाँ अनुयायी बनने, इबादत करने, ताबीज़ लेने अथवा विभिन्न मसलों पर शेख की मध्यस्थता के लिए आते थे।
- कुछ अन्य मिलने वालों में अमीर हसन सिजज़ी और अमीर खुसरो जैसे कवि तथा दरबारी इतिहासकार ज़ियाउद्दीन बरनी जैसे लोग शामिल थे।
- इन सभी लोगों ने शेख के बारे में लिखा ।

- सूफ़ी संतों के द्वारा स्थानीय परंपराओं को आत्मसात करने का प्रयत्न किया गया जैसे-

1. शेख के सामने झुकना
2. मिलने वालों को पानी पिलाना
3. दीक्षितों के सर का मुंडन
4. यौगिक व्यायाम आदि व्यवहार इस तथ्य के द्योतक।

- शेख निज़ामुद्दीन ने कई आध्यात्मिक वारिसों का चुनाव किया और उन्हें उपमहाद्वीप के विभिन्न भागों में ख़ानक़ाह स्थापित करने के लिए नियुक्त किया।
- इस वजह से चिश्तियों के उपदेश, व्यवहार और संस्थाएँ तथा शेख का यश चारों ओर फैल गया।
- उनकी तथा उनके आध्यात्मिक पूर्वजों की दरगाह पर अनेक तीर्थयात्री आने लगे।

चिश्ती उपासना : ज़ियारत और कव्वाली

- अलग-अलग संप्रदायों, वर्गों और समुदायों के लोग महान् चिश्ती संतों की दरगाह पर अपनी आस्था प्रकट करते रहे हैं चिश्तियों में सबसे अधिक पूजनीय दरगाह ख़्वाजा मुइनुद्दीन [illegible] (अजमेर) की है जिन्हें 'ग़रीब नवाज़' कहा जाता है।



- यह दरगाह शेख की सदाचारिता और धर्मनिष्ठा तथा उनके आध्यात्मिक वारिसों की महानता और राजसी मेहमानों द्वारा दिए गए प्रश्रय के कारण लोकप्रिय थी।
- मुहम्मद-बिन-तुगलक (1324 - 51) पहला सुल्तान था जो इस दरगाह पर आया था।
- किंतु शेख की मज़ार पर सबसे पहली इमारत मालवा के सुल्तान

गियासुद्दीन खिलजी ने पंद्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में बनवाई।

- सोलहवीं शताब्दी तक आते-आते अजमेर की यह दरगाह बहुत ही लोकप्रिय हो गई थी।
- इस दरगाह को जाने वाले तीर्थयात्रियों के भजनों ने ही अकबर को यहाँ आने के लिए प्रेरित किया।
- अकबर यहाँ चौदह बार आया कभी तो साल में दो-तीन बार, कभी नयी जीत के लिए आशीर्वाद लेने अथवा संकल्प की पूर्ति पर या फिर पुत्रों के जन्म पर।
- 1568 में अकबर ने तीर्थयात्रियों के लिए खाना पकाने हेतु एक विशाल देग़ दरगाह को भेंट की। उन्होंने दरगाह के अहाते में एक मस्जिद भी बनवाई।



- नाच और संगीत भी ज़ियारत का हिस्सा थे।
- सूफी संत ज़िक्र (ईश्वर का नाम - जाप) या फिर समा (श्रवण करना) यानी आध्यात्मिक संगीत की महफिल के द्वारा ईश्वर की उपासना में विश्वास रखते थे।

भाषा और संपर्क

- न केवल समा में चिश्तियों ने स्थानीय भाषा को अपनाया अपितु दिल्ली में चिश्ती सिलसिले के लोग हिंदवी में बातचीत करते थे।
- बाबा फरीद (खानकाह-अजोधन, पंजाब) ने भी क्षेत्रीय भाषा में काव्य रचना की जो गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित है।
- मलिक मोहम्मद जायसी का प्रेमाख्यान पद्मावत पद्मिनी और चित्तौड़ के राजा रतनसेन की प्रेम कथा के इर्द-गिर्द घूमता है।
- अक्सर ख़ानक़ाहों में समा के दौरान ऐसे काव्यों का वाचन होता था।
- कुछ और रचनाएँ लोरीनामा और शादीनामा के रूप में लिखी गई ।
- लिंगायतों द्वारा लिखे गए कन्नड़ के वचन और पंढरपुर के संतों द्वारा

लिखे मराठी के अभंगों ने भी उन पर अपना प्रभाव छोड़ा।

सूफी और राज्य

- चिश्ती संप्रदाय की एक और विशेषता संयम और सादगी का जीवन था जिसमें सत्ता से दूर रहने पर बल दिया जाता था।
- सत्ताधारी विशिष्ट वर्ग अगर बिना माँगे अनुदान या भेंट देता था तो सूफी संत उसे स्वीकार करते थे।
- सुल्तानों ने कईबार खानकाहों को कर मुक्त (इनाम) भूमि अनुदान में दी।
- चिश्ती धन और सामान के रूप में दान स्वीकार करते थे किंतु इनको सँजोने के बजाय खाने, कपड़े, रहने की व्यवस्था और अनुष्ठानों जैसे समा की महफिलों पर पूरी तरह खर्च कर देते थे।
- इस तरह शेख के नैतिक अधिकार की पुष्टि होती थी और आम लोगों का उनकी ओर झुकाव बढ़ता था।
- सूफी संतों की धर्मनिष्ठा, विद्वता और लोगों द्वारा उनकी चमत्कारी शक्ति में विश्वास उनकी लोकप्रियता का कारण था।
- इन वजहों से शासक भी उनका समर्थन हासिल करना चाहते थे।
- जब तुर्कों ने दिल्ली सल्तनत की स्थापना की तो उलमा द्वारा शरिया लागू किए जाने की माँग को ठुकरा दिया गया।
- क्योंकि सुल्तान जानते थे कि उनकी अधिकांश प्रजा इस्लाम धर्म मानने वाली नहीं है।
- ऐसे समय सुल्तानों ने सूफी संतों का सहारा लिया जो अपनी आध्यात्मिक सत्ता को अल्लाह से उद्भूत मानते थे जो उलमा द्वारा शरिया की व्याख्या पर निर्भर नहीं थे।
- यह भी माना जाता था कि औलिया मध्यस्थ के रूप में ईश्वर से लोगों की ऐहिक और आध्यात्मिक दशा में सुधार लाने का कार्य करते हैं।

- इसलिए शासक अपनी कब्र सूफी दरगाहों और ख़ानक़ाहों के नज़दीक बनाना चाहते थे।
- सुल्तानों और सूफ़ियों के बीच तनाव के उदाहरण भी मौजूद हैं।
- अपनी सत्ता का दावा करने के लिए दोनों ही कुछ आचारों पर बल देते थे जैसे-
  - झुक कर प्रणाम करना ।
  - कदम चूमना ।
- कभी-कभी सूफी शेखों को आडंबरपूर्ण पदवी से संबोधित किया जाता था।
- उदाहरणत - शेख निज़ामुद्दीन औलिया के अनुयायी उन्हें सुल्तान-उल-मशखे (अर्थात शेखों में सुल्तान) कह कर संबोधित करते थे।

नवीन भक्ति पंथ : उत्तरी भारत में संवाद और असहमति

- अनेक संत कवियों ने नवीन सामाजिक परिस्थितियों, विचारों और संस्थाओं के साथ स्पष्ट और सांकेतिक दोनों किस्म के संवाद कायम किए।
- इस काल के तीन प्रमुख और प्रभावकारी व्यक्तियों पर दृष्टिपात करेंगे। कबीर, बाबा गुरु नानक और मीराबाई ।



कबीर :-

- कबीर (चौदहवीं -पंद्रहवीं शताब्दी) -
- इतिहासकारों ने उनके जीवन और काल का अध्ययन उनके काव्य और बाद में लिखी गई। जीवनियों के आधार पर किया है। यह प्रक्रिया कई वजहों से चुनौतीपूर्ण रही है।
- कबीर की बानी तीन विशिष्ट किंतु परस्पर व्याप्त परिपाटियों में संकलित है।

1. कबीर बीजक कबीर पंथियों द्वारा वाराणसी तथा उत्तर प्रदेश के अन्य स्थानों पर संरक्षित है।
2. कबीर ग्रंथावली का संबंध राजस्थान के दादू पंथियों से है।
3. इसके अतिरिक्त कबीर के कई पद आदि ग्रंथ साहिब में संकलित हैं।

- लगभग सभी पांडुलिपियों का संकलन कबीर की मृत्यु के बहुत बाद में किया गया।
- कबीर की रचनाएँ अनेक भाषाओं और बोलियों में मिलती हैं।
- इनमें से कुछ निर्गुण कवियों की खास बोली संत भाषा में हैं।
- कुछ रचनाएँ जिन्हें उलटबाँसी (उलटी कही उक्तियाँ) के नाम से जाना जाता है, इस प्रकार से लिखी गई कि उनके रोज़मर्रा के अर्थ को उलट दिया गया।
- कबीर बानी की एक और विशिष्टता यह है कि उन्होंने परम सत्य को वर्णित करने के लिए अनेक परिपाटियों का सहारा लिया।
- इस्लामी दर्शन की तरह वे इस सत्य को अल्लाह, खुदा, हज़रत और पीर कहते हैं।
- वेदांत दर्शन से प्रभावित वे सत्य को अलख (अदृश्य), निराकार, ब्रह्मन् और आत्मन् कहकर भी संबोधित करते हैं।
- कुछ कविताएँ इस्लामी दर्शन के एकेश्वरवाद और मूर्तिभंजन का समर्थन करते हुए हिंदू धर्म के बहुदेववाद और मूर्तिपूजा का खंडन करती हैं।
- अन्य कविताएँ ज़िक्र और इश्क के सूफी सिद्धांतों का इस्तेमाल 'नाम सिमरन' की हिंदू परंपरा की अभिव्यक्ति करने के लिए करती हैं।
- क्या ये सभी कविताएँ कबीर द्वारा रची गईं? यह कहना मुश्किल है।
- कबीर की समृद्ध परंपरा इस तथ्य की द्योतक है कि कबीर पहले और आज भी उन लोगों के लिए प्रेरणा का स्रोत हैं जो सत्य की खोज में रूढ़िवादी, धार्मिक, सामाजिक संस्थाओं, विचारों और व्यवहारों को प्रश्नांकित दृष्टि से देखते हैं।

- इस विषय पर आज भी विवाद है कि वह जन्म से हिंदू थे अथवा मुसलमान और यह विवाद अनेक संत जीवनियों में उभर कर आते हैं जो सत्रहवीं शताब्दी यानी उनकी मृत्यु के 200 वर्ष बाद से लिखी गईं।
- वैष्णव परंपरा की जीवनियों में कबीर (कबीर का अरबी में अर्थ है महान्) को जन्म से हिंदू कबीरदास बताया गया है।
- किंतु उनका पालन गरीब मुसलमान परिवार में हुआ जो जुलाहे थे और कुछ समय पहले ही इस्लाम धर्म के अनुयायी बने थे।
- इन जीवनियों में यह भी कहा जाता है कि कबीर को भक्ति का मार्ग दिखाने वाले गुरु रामानंद थे।
- इतिहासकारों का यह भी मानना है कि कबीर और रामानंद का समकालीन होना मुश्किल प्रतीत होता है।

बाबा गुरु नानक और पवित्र शब्द

- बाबा गुरु नानक (1469-1539) → इनका जन्म [illegible] परिवार में हुआ।

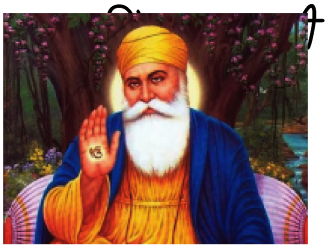

- उनका जन्मस्थल मुख्यतः इस्लाम धर्मावलंबी पंजाब का ननकाना गाँव था जो रावी नदी के पास था।
- उन्होंने फारसी पढ़ी और लेखाकार के कार्य का प्रशिक्षण प्राप्त किया।
- उनका विवाह छोटी आयु में हो गया था किंतु वह अपना अधिक समय सूफी और भक्ति संतों के बीच गुज़ारते थे।
- उन्होंने दूर-दराज़ की यात्राएँ भी कीं ।
- उन्होंने निर्गुण भक्ति का प्रचार किया।
- धर्म के सभी बाहरी आडंबरों को उन्होंने अस्वीकार किया जैसे- यज्ञ, अनुष्ठानिक स्नान, मूर्ति पूजा व कठोर तप ।

- हिन्दू और मुसलमानों के धर्मग्रंथों को भी उन्होंने नकारा।
- बाबा गुरु नानक के लिए परम पूर्ण रब का कोई लिंग या आकार नहीं था।
- उन्होंने इस रब की उपासना के लिए एक सरल उपाय बताया और वह था उनका निरंतर स्मरण व नाम का जाप।
- उन्होंने अपने विचार पंजाबी भाषा में शबद के माध्यम से सामने रखे।
- बाबा गुरु नानक यह शब्द अलग-अलग रागों में गाते थे और उनका सेवक मरदाना रबाब बजाकर उनका साथ देता था।
- बाबा गुरु नानक ने अपने अनुयायियों को एक समुदाय में संगठित किया।
- उन्होंने अपने अनुयायी अंगद को अपने बाद गुरुपद पर आसीन किया; इस परिपाटी का पालन 200 वर्षों तक होता रहा।
- बाबा गुरु नानक किसी नवीन धर्म की संस्थापना नहीं करना चाहते थे, किंतु उनकी मृत्यु के बाद उनके अनुयायियों ने अपने आचार-व्यवहार को सुगठित कर अपने को हिंदू और मुसलमान दोनों से पृथक चिह्नित किया।
- पाँचवें गुरु अर्जुन देव जी ने बाबा गुरु नानक तथा उनके चार उत्तराधिकारियों, बाबा फरीद, रविदास और कबीर की बानी को आदि ग्रंथ साहिब में संकलित किया। इन को "गुरबानी" कहा जाता है।
- सत्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में दसवें गुरु गोबिन्द सिंह जी ने नवें गुरु तेग बहादुर की रचनाओं को भी इसमें शामिल किया और इस ग्रंथ को गुरु ग्रंथ साहिब कहा गया।
- गुरु गोबिन्द सिंह ने खालसा पंथ (पवित्रों की सेना) की नींव डाली और उनके पाँच प्रतीकों का वर्णन किया : बिना कटे केश, कृपाण, कच्छ, कंघा और लोहे का कड़ा।

- खालसा पंथ की स्थापना :- 13 अप्रैल 1699
- गुरु गोबिन्द सिंह के नेतृत्व में समुदाय एक सामाजिक, धार्मिक और सैन्य बल के रूप में संगठित होकर सामने आया।

मीराबाई, भक्तिमय राजकुमारी

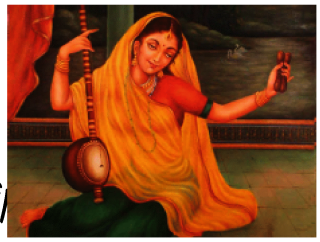

- मीराबाई (लगभग पंद्रहवीं-सोलहवीं शताब्दी) - ये संभवतः भक्ति परंपरा की सबसे सुप्रसिद्ध कवयित्री हैं।
- मीराबाई मारवाड़ के मेड़ता जिले की एक राजपूत राजकुमारी थीं जिनका विवाह उनकी इच्छा के विरुद्ध मेवाड़ के सिसोदिया कुल में कर दिया गया।
- उन्होंने अपने पति की आज्ञा की अवहेलना करते हुए पत्नी और माँ के परंपरागत दायित्वों को निभाने से इनकार किया और विष्णु के अवतार कृष्ण को अपना एकमात्र पति स्वीकार किया।
- वह राजभवन से निकल कर एक परिव्राजिका संत बन गई।
- कुछ परंपराओं के अनुसार मीरा के गुरु रैदास थे जो एक चर्मकार थे।
- इससे पता चलता है कि मीरा ने जातिवादी समाज की रूढ़ियों का उल्लंघन किया।

शंकरदेव

पंद्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में असम में शंकरदेव वैष्णव धर्म के मुख्य प्रचारक के रूप में उभरे। उनके उपदेशों को 'भगवती धर्म' कह कर संबोधित किया जाता है क्योंकि वे भगवद् गीता और भागवत पुराण पर आधारित थे। ये उपदेश सर्वोच्च देवता विष्णु के प्रति पूर्ण समर्पण भाव पर केंद्रित थे।

शंकरदेव ने भक्ति के लिए नाम कीर्तन और श्रद्धावान भक्तों के सत्संग में ईश्वर के नाम उच्चारण पर बल दिया। उन्होंने आध्यात्मिक ज्ञान के

प्रचार के लिए सत्र या मठ तथा नामघर जैसे प्रार्थनागृह की स्थापना को बढ़ावा दिया। इस क्षेत्र में ये संस्थाएँ और आचार आज भी पनप रहे हैं। शंकरदेव की प्रमुख काव्य रचनाओं में कीर्तनघोष भी है।

धार्मिक परंपराओं के इतिहासों का पुनर्निर्माण

- इतिहासकार धार्मिक परंपरा के इतिहास के पुनर्निर्माण के लिए अनेक स्रोतों का उपयोग करते हैं –जैसे मूर्तिकला, स्थापत्य, धर्मगुरुओं से जुड़ी कहानियाँ, स्त्री और पुरुषों द्वारा लिखी गई काव्य रचनाएँ आदि।
- मूर्तिकला और स्थापत्यकला का हम इस उद्देश्य के लिए तभी इस्तेमाल कर सकते हैं जब हम उसके संदर्भ को अच्छी तरह समझें अर्थात इन आकृतियों और इमारतों को बनाने और उनका इस्तेमाल करने वालों के विचारों, आस्थाओं और आचारों की हमें समझ हो ।
- साहित्यिक परंपराओं पर दृष्टिपात करें तो हम देखेंगे कि उनमें काफ़ी विविधता है, और वे कई भाषाओं व शैलियों में लिखे गए हैं।
- कुछ स्रोत सरल, स्पष्ट भाषा में हैं जैसे कि बसवन्ना के वचन जबकि कुछ अन्य अलंकृत फ़ारसी में लिखे गए हैं।
- प्रत्येक किस्म के मूल - पाठ को समझने के लिए तरह-तरह का कौशल चाहिएः कई भाषाओं की जानकारी, लेकिन इसके अलावा इतिहासकार को प्रत्येक विधि की शैली व शैलियों में सूक्ष्म अंतरों को भी पहचानना पड़ता है।

सूफी परंपरा के इतिहास के पुनर्निर्माण के लिए विभिन्न स्रोत

सूफी ख़ानक़ाहों के आसपास अनेक ग्रंथों की रचना हुई जिनमें निम्न शामिल हैं:

1. सूफी विचारों और आचारों पर प्रबंध पुस्तिका *कश्फ-उल-महजुब* यह पुस्तक *अली बिन उस्मान हुजविरी (मृत्यु 1071)* द्वारा लिखी गई। साहित्य इतिहासकारों को यह जानने में मदद करता है कि उपमहाद्वीप के बाहर की परंपराओं ने भारत में सूफी चिंतन को किस तरह प्रभावित किया।
2. **मुलफुज़ात (सूफी संतों की बातचीत):** मुलफुज़ात पर एक आरंभिक ग्रंथ *फवाइद-अल-फुआद* है। यह शेख निज़ामुद्दीन औलिया की बातचीत पर आधारित एक संग्रह है जिसका संकलन प्रसिद्ध फ़ारसी कवि *अमीर हसन सिजज़ी देहलवी* ने किया।
3. **मक्तुबात (लिखे हुए पत्रों का संकलन) :** ये वे पत्र थे जो सूफी संतों द्वारा अपने अनुयायियों और सहयोगियों को लिखे गए। इन पत्रों से धार्मिक सत्य के बारे में शेख के अनुभवों का वर्णन मिलता हैं।
4. **तज़किरा (सूफी संतों की जीवनियों का स्मरण) :** भारत में लिखा पहला सूफी तज़किरा *मीर खुर्द किरमानी* का *सियार-उल-औलिया* है। यह तज़किरा मुख्यतः चिश्ती संतों के बारे में था। सबसे प्रसिद्ध तज़किरा *अब्दुल हक मुहाद्दिस देहलवी (मृत्यु 1642)* का *अख्बार-उल-अखयार* है।

काल-रेखा

भारतीय उपमहाद्वीप के कुछ मुख्य धार्मिक शिक्षक

लगभग 500-800 ई.पू	तमिलनाडु में अप्पार, संबंदर, सुंदरमूर्ति
लगभग 800-900 ईसवीं	तमिलनाडु में नम्मलवर, मणिक्वचक्कार, अंडाल, तोंदराडिप्पोडी
लगभग 1000-1100 ईसवी	पंजाब में अल हुजविरी, दाता गंज बक्श; तमिलनाडु में रामानुजाचार्य
लगभग 1100-1200 ईसवी	कर्नाटक में बसवन्ना
लगभग 1200-1300 ईसवी	महाराष्ट्र में ज्ञानदेव मुक्ताबाई; राजस्थान में ख्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती; पंजाब में बहादुद्दीन जकारिया और फरीदुद्दीन गंज-ए-शकर; दिल्ली में कुतबुद्दीन बख्तियार काकी

काल-रेखा	
भारतीय उपमहाद्वीप के कुछ मुख्य धार्मिक शिक्षक	
लगभग 1300-1400 ईसवी	कश्मीर में लाल देद; सिंध में लाल शाहबाज़ कलंदर; दिल्ली में निज़ामुद्दीन औलिया; उत्तर प्रदेश में रामानंद; महाराष्ट्र में चोखमेला; बिहार में शराफुद्दीन याह्या मनेरी
लगभग 1400-1500 ईसवी	उत्तर प्रदेश में कबीर, रैदास, सूरदास; पंजाब में बाबा गुरु नानक; गुजरात में बल्लभाचार्य; ग्वालियर में अबदुल्ला सत्तारी; गुजरात में मुहम्मद शाह आलम; गुलबर्गा में मीर सैयद मौहम्मद गेसू दराज़; असम में शंकरदेव; महाराष्ट्र में तुकाराम
लगभग 1500-1600 ईसवी	बंगाल में श्री चैतन्य; राजस्थान में मीराबाई; उत्तर प्रदेश में शेख अब्दुल कुद्दस गंगोही, मलिक मौहम्मद जायसी, तुलसीदास
लगभग 1600-1700 ईसवी	हरियाणा में शेख अहमद सरहिंदी; पंजाब में मियाँ मीर

LET'S LEARN TOGETHER